# अध्याय-3

# भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारिक संरचना

## वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन के लिए आधारित संरचना

जब हम कच्चे माल, श्रम और उद्यम के अलावा एक अर्थव्यवस्था की उत्पादन प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक साधनों के बारे में विचार करते हैं तो अक्सर हमारे दिमाग में खेतों व कारखानों में प्रयुक्त हल, ट्रैक्टर्स और मशीनों जैसे विभिन्न प्रकार के उपकरणों वाली पूंजीगत परिसम्पत्तियां होती हैं। जिन वस्तुओं का हम उत्पादन करना चाहते हैं उनके लिए ये सब आवश्यक हैं। किन्तु हमें याद रखना चाहिए कि हम केवल वस्तुएं ही नहीं चाहते बल्कि शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सेवाएं भी चाहते हैं। इसी प्रकार, स्वयं उत्पादन प्रक्रिया के लिए भी केवल कच्चे माल, श्रम, उद्यम और पूंजी उपकरणों की ही आवश्यकता नहीं होती बल्कि परिवहन और बैंकिंग जैसी कुछ सेवाओं की भी आवश्यकता होती है।

उत्पादन की प्रक्रिया को सहायता पहुंचाने की दृष्टि से कुछ सेवाओं की तो अर्थव्यवस्था को प्रत्यक्ष रूप से ही आवश्यकता पड़ती है। कच्चे माल को उत्पादन के स्थान तक ढोना इसी प्रकार की एक सेवा है। जिस प्रकार से एक वस्तु के उत्पादन के लिए कच्चा माल ''इन्पुट्स'' हैं उसी तरह कच्चे माल को ढोना भी उस वस्तु के उत्पादन के लिए ''इन्पुट'' ही है।

वस्तुत: अर्थशास्त्री सामान्यतया वस्तु को बेचने के बिन्दु-जिसे ''उपभोग'' के बिन्दु के रूप में भी परिभाषित किया जाता है-तक की समूची प्रक्रिया को ही उत्पादन मानते हैं। इस प्रकार, उत्पादन के दौरान कच्चे माल का परिवहन, बाज़ार तक तैयार माल का परिवहन और अन्त में बिक्री बढ़ाने के उद्देश्य से वस्तु का विज्ञापन-इन सबको ''उत्पादक'' सेवाएं कहा जा सकता है।

कुछ और भी दूसरी सेवाएं हैं जिन्हें हम एक वस्तु की तरह ही खरीदते अथवा ''उपभोग'' कहते हैं, जैसे यात्रियों का परिवहन तथा इसी तरह स्वास्थ्य सेवाएं और शिक्षा (ये दोनों उत्पादक सेवाएं ही हैं) जैसे जब सेवाएं उत्पादन और वितरण की प्रक्रिया में सहायता पहुंचाती हैं और इस प्रकार वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि करती हैं तो वे ''उत्पादक'' सेवाएं कहलाती हैं, वैसे ही ''उपभोक्ता सेवाएं'' भी होती हैं जो उपभोक्ता वस्तुओं की तरह ही होती हैं।

दोनों ही प्रकार की सेवाओं को प्रदान करने के लिए कुछ सुविधाओं (जैसे सड़क, बसें, अस्पतालों, विद्यालयों) का निर्माण करना होता है। ये ठीक उसी प्रकार से अर्थव्यवस्था के पूंजी-ढांचे का भाग होती हैं जिस तरह से वस्तुओं का उत्पादन करने वाली फैक्ट्रियां और मशीनें अथवा खेत और ट्रैक्टर होते हैं। इस स्थिति में जो अन्तर है वह केवल यह है कि वे सेवाओं का उत्पादन करती हैं। यदि हम स्मरण रखें कि हमारा राष्ट्रीय उत्पाद केवल वस्तुओं से ही नहीं बल्कि वस्तुओं और सेवाओं दोनों से मिलकर बनता है तो अर्थव्यवस्था के पूंजी स्टॉक का यह व्यापक विचार हमें बिल्कुल स्वाभाविक लगेगा। अर्थव्यवस्था के पूंजी स्टॉक का यह भाग जो विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान करने की दृष्टि से आवश्यक होता है, अर्थव्यवस्था का सहायक ढांचा अथवा ''आधारिक संरचना'' कहलाता है।

## आधारिक संरचनाएं-सामाजिक और आर्थिक

अर्थव्यवस्था में सेवाओं को आधार प्रदान करने वाला ढांचा दो प्रकार का हो सकता है। पहला प्रकार वार्षिक प्रक्रियाओं को अप्रत्यक्ष रूप से तथा उत्पादन एवं वितरण की प्रणाली के बाहर से अपना योगदान प्रदान करता है। स्कूल, कॉलेज एवं अन्य संस्थाओं का ढांचा जो शिक्षा की सेवाएं प्रदान करता है इसी प्रकार का एक उदाहरण है।

कुछ अर्थों में, शिक्षा प्रणाली अधिकांश आर्थिक प्रक्रियाओं में शामिल नहीं होती है। इसी तरह स्वास्थ्य सेवाओं की प्रणाली है। किन्तु दोनों ही ऐसी सेवाएं प्रदान करती हैं जो इन आर्थिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करती हैं (कभी-कभी तो अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण ढंग से) दोनों ही प्रकार की सेवाएं लोगों की उत्पादक क्षमता में वृद्धि करती हैं। इसके अलावा जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि शिक्षा स्वयं एक उपभोग वस्तु की तरह आंशिक रूप से सन्तुष्टि भी प्रदान करती है। इसी तरह स्वास्थ्य सेवाएं भी एक प्रकार का उपभोग ही हैं, यद्यपि यहां उपभोक्ता की सन्तुष्टि कुछ मात्रा में एक विशेष प्रकार की होती है। एक महत्त्वपूर्ण बात जो ध्यान देने की है वह यह है कि ये सेवाएं अर्थव्यवस्था में स्कूल, अस्पताल जैसा इन संस्थाओं के माध्यम से उत्पन्न की जाती हैं जो उत्पादन की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूप से सहायक नहीं होती हैं। किन्तु ऐसी सेवाएं निस्सन्देह रूप से अर्थव्यवस्था के एक महत्त्वपूर्ण सहायक ढांचे का निर्माण करती हैं। यह सहायक ढांचा ही अर्थव्यवस्था की सामाजिक आधारित संरचना है।

दूसरे प्रकार का ढांचा जो अर्थव्यवस्था में सेवाएं प्रदान करने में सहायता पहुंचाता है वह बाहर स्थित नहीं होता बल्कि उत्पादन और वितरण की प्रणाली के अन्तर्गत ही स्थित रहता है। वायु मार्ग स्वयं उत्पादन और वितरण की प्रक्रियाओं का हिस्सा बनकर ही सेवाएं प्रदान करता है। इसी प्रकार बैंकिंग प्रणाली मुद्रा एवं पूंजी बाज़ार का एक सक्रिय अंग है जहां से उद्योगों एवं कृषि के लिए वित्त प्राप्त किया जाता है। परिवहन प्रणाली और बैंकिंग प्रणाली दोनों ही ऐसी सेवाएं उत्पन्न करने वाली संस्थाओं के उदाहरण हैं जो पूर्णतया अर्थव्यवस्था की प्रक्रियाओं के भीतर से ही काम करती हैं। इस प्रकार की प्रणालियां अर्थव्यवस्था के लिए एक दूसरा सहयोगी ढांचा प्रदान करती हैं। यह अर्थव्यवस्था की सामाजिक आधारिक संरचना, जिसको हमने ऊपर परिभाषित किया था, से भिन्न आर्थिक आधारिक संरचना है।

नीचे के खण्डों में हम अपनी अर्थव्यवस्था की इन दोनों प्रकार की आधारिक संरचनाओं के मुख्य अंगों का ही वर्णन करेंगे। यह इन दोनों प्रकारों के बीच के मुख्य अन्तर को और अधिक स्पष्ट कर सकेगा। किन्तु यहां हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि ऐसी सेवाएं भी हो सकती हैं जो इन दोनों ही आधारिक संरचनाओं से सम्बन्ध रखती हों, जैसा कि संचार सेवाओं के निम्नलिखित उदाहरण में पाया जाता है।

## संचार एवं सूचनाओं का प्रेषण

संचार तन्त्र सामाजिक एवं आर्थिक संरचना दोनों का ही अंग होता है। आज हमारे पास संचार माध्यमों के कई प्रकार हैं। सामान्य डाक सेवाओं के अलावा, हमारे पास डाक एवं तार विभाग द्वारा प्रदान किए जाने वाले तार एवं टेलीफोन हैं। इसके अतिरिक्त हमारे यहां आकाशवाणी द्वारा ठोस प्रसारण व्यवस्था, दूरदर्शन द्वारा टेलीविज़न और इन सबसे ऊपर सिनेमा और अखबार भी हैं। संचार प्रणाली निवेशकर्त्ता, उत्पादक एवं उपभोक्ता द्वारा निर्णय लेने की प्रक्रियाओं के लिए महत्त्वपूर्ण सूचनाओं के प्रवाह को ले जाने का काम करती हैं। यह बाज़ार के अन्तर्गत हो रहे तमाम परिवर्तनों की जानकारी देती हैं। मांग और पूर्ति के बारे में सूचनाएं मिले बिना, उत्पादन एवं वितरण की प्रक्रियाओं की कल्पना करना ही कठिन होगा। अतः इस अर्थ में तो संचार तन्त्र स्वयं उत्पादन प्रक्रियाओं और इस कारण आर्थिक आधारिक संरचना का ही एक हिस्सा है। किन्तु दूसरी ओर संचार को शिक्षा की तरह ही व्यापक एक सेवा के रूप में देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, प्रसारण प्रणाली का कक्षा की जगह उपयोग किया जा सकता है। इस अर्थ में संचार का तन्त्र सामाजिक आधारिक संरचना का ही हिस्सा बन जाता है।

## सामाजिक आधारिक संरचना : शिक्षा, प्रशिक्षण एवं शोध

एक अर्थव्यवस्था में शिक्षा के लिए काफी बड़ी मात्रा में साधन खप जाते हैं। यह कोई दिखने वाली वस्तुओं का उत्पादन तो नहीं करती लेकिन फिर भी वस्तुओं के उत्पादन की दृष्टि से यह काफी महत्त्वपूर्ण

भूमिका अदा करती है क्योंकि यह लोगों को कौशल सिखाती है। अतः शिक्षा पर हमारे साधनों के निवेश करने से उसी प्रकार के मूर्त आर्थिक परिणाम प्राप्त होते हैं जिस प्रकार एक कारखाने के निर्माण में निवेश करने से प्राप्त होते हैं। फिर भी, हमें याद रखना है कि सभी स्तरों पर लोगों को सभी प्रकार के कौशलों की शिक्षा देने के लिए किसी भी अर्थव्यवस्था के पास न तो पर्याप्त साधन होते हैं और न ही इसकी आवश्यकता होती हैं। हमें इस बारे में यह निर्णय करना चाहिए कि हमारी आवश्यकताओं की दृष्टि से हमारे लिए कौशल निर्माण के कौन से प्रकार अधिक अनिवार्य और कौन से कम महत्त्व के हैं।

कुछ कौशल तो इतने आधारभूत होते हैं कि हम चाहते हैं कि उन्हें तो प्रत्येक बालक सीखे। पढ़ने-लिखने और साधारण हिसाब की गणना का कौशल सीखना काफी सरल है! किन्तु ये इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि इनके सीखे बिना कोई भी बालक एक पूर्ण नागरिक के रूप में विकसित नहीं हो सकता। इसी प्रकार हम कुछ अन्य आधारभूत कौशलों के बारे में भी सोच सकते हैं जिन्हें हम केवल कुछ ही बालकों को नहीं बल्कि सभी को सिखाना चाहते हैं। न्यूनतम आधारभूत कौशलों को सिखाना ही प्रारम्भिक शिक्षा कहलाती है। आज प्रत्येक आधुनिक समाज निःशुल्क अनिवार्य एवं सार्वभौमिक प्रारम्भिक शिक्षा को अपना एक उच्च प्राथमिकता वाला लक्ष्य मानता है। हमारी अर्थव्यवस्था में भी इसे एक संवैधानिक जिम्मेदारी के रूप में माना गया है। हमें विशेष रूप से पिछड़े इलाकों में प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में अतिरिक्त भर्ती के लिए अध्यापकों एवं पढ़ाई के कमरों के निर्माण की दृष्टि से हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में लगातार अधिकाधिक व्यवस्था करते जाना है।

प्राथमिक शिक्षा के द्वारा सिखाए जाने वाले आधारभूत कौशलों के अलावा अर्थव्यवस्था को अपनी मानव शक्ति के लिए अन्य दूसरे प्रकार के कौशलों की भी आवश्यकता रहती है। ये केवल उन्हें ही सिखाए जा सकते हैं जो उनसे सम्बन्धित क्षेत्रों में इन्हें सीख सकते हैं। इसी प्रकार हरेक व्यक्ति को एक अच्छे मकैनिक या एक अच्छे बढ़ई के रूप में प्रशिक्षित नहीं किया जा सकता और न ही इसकी आवश्यकता है। किन्तु हमारी अर्थव्यवस्था में प्रशिक्षित मानव शक्ति की आवश्यकता काफी अधिक है। यद्यपि यह इतनी अधिक नहीं है कि हमें अपनी सम्पूर्ण कार्यशील जनसंख्या को ही इन विशेष कौशलों में प्रशिक्षित करने की आवश्यकता पड़े।

जब हम और अधिक जटिल कौशलों की ओर देखते हैं तो हम पाते हैं कि अर्थव्यवस्था को इनकी और भी कम संख्या में आवश्यकता है। किन्तु जिन भी कौशलों की हमें आवश्यकता होती है वे काफी अधिक विशिष्टीकृत होते हैं। इस प्रकार की विशिष्टीकृत आवश्यकताओं को मात्र कालेज एवं विश्वविद्यालय जैसी उच्च स्तर की शिक्षा संस्थाओं के द्वारा ही पूरा किया जा सकता है! इसीलिए प्रत्येक आधुनिक देश में आर्थिक साधनों को लगाने के दृष्टिकोण से उच्च शिक्षा को संख्या के हिसाब से तो निम्न प्राथमिकता दी जाती है किन्तु स्तर के हिसाब से बहुत ऊंची प्राथमिकता दी जाती है।

प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर भर्ती का विस्तार तो एक उपलब्धि के रूप में देखा जा सकता है। किसी हद तक, व्यावसायिक शिक्षा को आधार प्रदान करने के लिए यह माध्यमिक शिक्षा में भी आवश्यक है, किन्तु यह उच्च शिक्षा के स्तर पर जाकर अपने आप अर्थहीन हो जाता है। उदाहरण के लिए, इस स्तर पर हमारी अर्थव्यवस्था को उस संख्या से ज्यादा की आवश्यकता नहीं है जितनी कि हमारे पास पहले से ही मौजूद है। किन्तु इसे उच्च स्तर अर्थात् अधिक अच्छे प्रशिक्षण, शोध के अधिक अच्छे स्तर तथा अधिक अच्छे संगठन की आवश्यकता है। अतः हमारी अर्थव्यवस्था में उच्च शिक्षा में लगाए गए साधनों को विस्तार की बजाय शिक्षा के सुदृढ़ीकरण तथा प्रशिक्षण एवं शोध में सुधार लाने पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। अन्यथा हम शिक्षित पुरुषों एवं महिलाओं जिनकी शिक्षा पर साज को काफी अधिक साधन खर्च करने पड़ते हैं की बेरोज़गारी की समस्या से बच नहीं पाएंगे।

एक अर्थ में देश में स्वास्थ्य सेवाओं का ढांचा उस देश की सामाजिक प्राथमिकताओं को प्रकट करेगा। इसका सर्वाधिक महत्त्व तो इस बात में है कि जहां यह अमीर और गरीब के बीच, विशेष सुविधा प्राप्त और कम सुविधा प्राप्त के बीच असमानताओं को कम कर सकता है-उसी तरह यह असमानताओं को बढ़ा भी सकता है। हमारी अर्थव्यवस्था की स्वास्थ्य सेवाओं के सामने मुख्य रूप से दो विकल्प हैं। प्रथम, हम रोग के नियन्त्रण पर अधिक ज़ोर दे सकते हैं अथवा हम उपचारात्मक दवा पर ज़ोर दे सकते हैं। द्वितीय, हमारा ज़ोर अस्पताल-आधारित देखभाल पर हो सकता है अथवा यह समुदाय-आधारित देखभाल पर हो सकता है।

प्रत्येक चयन का आर्थिक दृष्टि से अपना एक अर्थ होता है। पहले हमारे देश में स्वास्थ्य सेवाएं निरोधात्मक दवाओं पर ही अधिक आधारित होती थीं। इसका परिणाम यह होता था कि हम स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता के बारे में केवल तब सजग होते थे जब कोई व्यक्ति बीमार हो जाता था अथवा जब चारों ओर एक महामारी फैल जाती थी। ऐसी स्थिति में स्पष्ट है कि एक व्यक्ति जो काम पर गए बिना ही गुजारा चला सकता था वह उस गरीब व्यक्ति की तुलना में लाभप्रद स्थिति में रहता था जो यदि काम पर नहीं जाए तो भूखों मरता था। न केवल यह प्रणाली ही अनुचित है बल्कि यदि एक देश में बीमारी फैलती है तो यह उसके लिए आर्थिक दृष्टि से भी उचित नहीं है। यह इसलिए अनार्थिक है क्योंकि बीमारी का मतलब है कार्य-घण्टों की हानि। अत: यदि अधिकांश लोग गरीब हैं और बीमारी से ग्रस्त हैं तो तुलनात्मक और निरोधात्मक चिकित्सा पर अधिक ज़ोर दिया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, केवल मात्र कुछ लोगों के लिए महंगी उपचार व्यवस्था की बजाय सभी लोगों के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं, अधिक अच्छी जन सुविधाओं, पीने के पानी आदि की व्यवस्था पर ज़ोर दिया जाना चाहिए।

हमारे देश में स्वास्थ्य सेवाएं परम्परागत रूप से शहरों में बड़े अस्पतालों पर आधारित और नके इर्द-गिर्द केन्द्रित रही हैं। यह प्रणाली अमीरों और शहरी लोगों के प्रति पक्षपात पूर्ण ही नहीं है बल्कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की दृष्टि से अनार्थिक भी है। कीमती उपकरणों वाले बड़े अस्पतालों के लिए काफी बड़ी मात्रा में निवेश की आवश्यकता होती हैं। किन्तु अधिकांस बीमारियों में जो हमारे देश के लोगों की अधिकांश संख्या को प्रभावित करती हैं उनके लिए केवल साधारण दवाइयों एवं तुलनात्मक रूप से आसान सर्जरी की ही आवश्यकता होती है। यह सब दूर-दूर फैले हुए स्वास्थ्य केन्द्रों तथा मध्यम स्तर के डाक्टरों एवं अर्द्ध चिकित्सा कर्मचारी के माध्यम से अधिक सस्ते रूप में प्रदान की जा सकती है। यह सच है कि एक ग्रामीण स्वास्थ्य केन्द्र में उच्च स्तर की परिष्कृत सर्जरी असम्भव होगी। किन्तु किसी एक बीमार पर इस प्रकार की सर्जरी की जितनी लागत आती है वह प्राथमिक किस्म के सर्जिकल काम की ओर ध्यान देकर सैकड़ों लोगों का जीवन बचाने के लिए पर्याप्त होगी।

हमारी अर्थव्यवस्था में स्वास्थ्य सेवाओं का यह ढांचा हमारे सामने उपस्थित इन चुनावों के प्रति पहले की तुलना में अधिक संवेदनशील होता जा रहा है। हम समूचे लोगों की दृष्टि से बीमारी की सामाजिक लागतों तथा उपचार एवं रोग नियन्त्रण के तुलनात्मक लाभों की गणना करना सीख रहे हैं। इस प्रकार हम पाते हैं कि अब हमारी योजनाओं में मलेरिया-नियन्त्रण, अन्धापन-नियन्त्रण, फिलोरिया-नियन्त्रण जैसे सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के स्थान पर मिलावट रोकने के लिए खाद्य जांच प्रयोगशालाओं की स्थापना जैसे कामों पर जोर बढ़ता जा रहा है। हाल ही के वर्षों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों एवं उपकेन्द्रों के साथ-साथ ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का भी काफी तेज़ी से विकास राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम के पूरक

के रूप में एक और कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ है जो अर्थव्यवस्था के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह बड़ी तेज़ी से बढ़ती हुई जनसंख्या नीति के अनुसार प्रारम्भ किया गया परिवार कल्याण कार्यक्रम है। यह सच है कि किसी उचित जनसंख्या नीति के अभाव में भारत की विशाल जनसंख्या का बढ़ता लगातार जारी रहेगा। जो पहले ही 1950-51 में लगभग 36 करोड़ से बढ़कर 1991 में 84.39 करोड़ तक पहुंच गई है अर्थात् चालीस वर्षों में अढ़ाई गुना हो गई है। किन्तु "छोटे परिवार" को एक वांछनीय आदर्श के रूप में ग्रहण करना एवं स्वीकार करना वृद्धि की इस दर को धीमा कर सकेगा। यह सब देशों का एक सामान्य अनुभव है कि स्वास्थ्य की उचित देखभाल जीवन की प्रत्याशा में वृद्धि करती है तथा लोगों को अधिकाधिक छोटे परिवार एवं आर्थिक दृष्टि से अधिक संन्तुष्ट जीवन शैली अपनाने को प्रेरित करती है।

## सामाजिक आधारिक संरचना : आवास

यदि किसी से पूछा जाए कि भोजन एवं कपड़े के बाद वह कौन-सी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है जो किसी के आर्थिक कल्याण के स्तर को निर्धारित करती है तो स्वाभाविक रूप से उत्तर आएगा-आवास। फिर भी, भोजन अथवा कपड़े के अलावा, एक मकान का होना भी अपने आप में पूर्ण नहीं है। उदाहरण के लिए, यदि किसी के पास एक ऐसे क्षेत्र में बहुत बढ़िया मकान है जहां और कोई मकान नहीं बना हुआ है, तो हो सकता है कि वह उस मकान को रहने के लिए ज्यादा अच्छा न माने। समाज में हम जिस प्रकार की आवास सेवा की अपेक्षा करते हैं वह केवल मात्र एक मकान की व्यवस्था कर देने से कहीं अधिक व्यापक है। आवास का अर्थ होता है-स्वच्छ पानी की पूर्ति, मलव्यय (सीवरेज) आदि जैसी सुविधाओं के साथ एक अच्छा पड़ौस। एक व्यक्ति अपने लिए एक मकान खरीद सकता है अथवा बनवा सकता है किन्तु वह अपने स्वयं के लिए पड़ौस के लाभों का निर्माण नहीं कर सकता।

आवास भी अर्थव्यवस्था की सामाजिक आधारिक संरचना का एक अंग होता है। शिक्षा एवं स्वास्थ्य प्रणाली जैसे अंगों की तरह आवास भी समाज में असमानताओं को कम कर सकता है अथवा बढ़ा सकता है। हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में आवास कार्यक्रमों का मुख्य जोर हमारे समाज के गरीब वर्गों के लिए आवास सुविधाओं में सुधार करने की दिशा में है।

देश के प्रत्येक राज्य में एक राज्य आवास बोर्ड है। योजना के अन्तर्गत राज्य आवास बोर्डों को शहरी क्षेत्रों में निम्न एवं माध्यम आय वर्ग के लोगों के लिए आवास कालोनियां बनाने के कार्यक्रमों को प्रारम्भ करने या उनका विस्तार करने के लिए सहायता दी जाती है। उसी तरह ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन मज़दूरों के लिए आवास स्थान की व्यवस्था करने के लिए भी एक बड़े पैमाने पर कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का अधिकांश काम राज्यों द्वारा ही किया जाता है। केन्द्रीय क्षेत्र में आवास एवं शहरी विकास निगम भी इस काम में कार्यरत है। बागान मजदूरों एवं गोदी मज़दूरों के लिए सस्ती दर पर आवास व्यवस्था के लिए भी अलग से प्रावधान किए गए हैं। अच्छे एवं शहरी विकास निगम भी इस काम में कार्यरत है। बागान मज़दूरों एवं मोदी मज़दूरों के लिए सस्ती दर पर आवास व्यवस्था के लिए भी अलग से प्रावधान किए गए हैं। अच्छे एवं सस्ते आवास डिज़ाइनों को तैयार करने के लिए अन्वेषण एवं विकास गतिविधियों पर भी अधिक ज़ोर दिया जा रहा है।

## सामाजिक आधारिक संरचना : अन्य नागरिक सुविधाएं

सामाजिक आधारिक संरचना शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास एवं अन्य अनेकों नागरिक सुविधाओं के ढांचे का मिला जुला नाम है। यह समझना कठिन नहीं है कि ये व्यक्तिगत ढांचे एक दूसरे से स्वतन्त्र नहीं हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा प्रणाली से लोगों को जो सेवा प्राप्त होती है वह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि स्वास्थ्य प्रणाली अथवा आवास सुविधाएं क्या सेवा प्रदान करती हैं। इसी प्रकार स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आवास

पर निर्भर करता है, आवास के लाभों में पड़ौस में उपलब्ध शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं को भी शामिल किया जाता है और इसी तरह अन्य कई उदाहरण हो सकते हैं। इन तीन के अलावा लोगों के आर्थिक जीवन में सेवा के अन्य और भी कई स्रोत हैं। ये सब सामाजिक आधारिक संरचना के हिस्से होते हैं। यह याद रखना आवश्यक है कि शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास की तरह ये अन्य सुविधाएं भी परस्पर निर्भर होती हैं। कई बार एक प्रकार की नागरिक सुविधा एवं दूसरे प्रकार की नागरिक सुविधा के बीच सीमा-रेखा खींचना कठिन होता है।

शहरी विकास एक बड़ी मद है जिसके लिए पंचवर्षीय योजनाओं में शहरों एवं कस्बों में सड़क बनाने, गन्दी बस्तियों को हटाने, बाज़ार स्थलों का निर्माण करने, गृह निर्माण डिज़ाइनों तथा भवनों के लिए सुरक्षा स्तरों की योजना तैयार करने जैसी अनेक नागरिक सेवा परियोजनाओं के लिए वित्त का आवंटन किया जाता है।

हमारी जैसी अर्थव्यवस्था में, जहां आय स्तर काफी कम है, लोगों के लिए विशेष रूप से माताओं एवं छोटे शिशुओं के लिए न्यूनतम पोषण की व्यवस्था करना एक आवश्यक सामाजिक सेवा है। विभिन्न प्रकार के पोषाहार कार्यक्रम वास्तव में देश की स्वास्थ्य सेवाओं के लिए आवश्यक रूप से पूरक हैं।

दूसरी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सेवा जल आपूर्ति एवं स्वच्छता की है। ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य सुदूर गांवों में स्वच्छ पीने का पानी प्रदान करना है। भारत में आज भी लगभग एक लाख गांव ऐसे हैं जिनमें स्वच्छ पीने के पानी की व्यवस्था का अभाव है। इसीलिए योजनाओं में इन सब गांवों तक स्वच्छ पीने का पानी पहुंचाने के कार्यक्रम को प्रथम प्राथमिकता दी गई है।

इसी प्रकार, शहरी जल-आपूर्ति एवं स्वच्छता योजना का उद्देश्य छोटे कस्बों में जल-आपूर्ति सुविधाओं, मलव्ययन (सीवरेज) एवं नालियों की व्यवस्था करना है। कस्बों में जल-आपूर्ति एवं स्वच्छता के ढांचे को खड़ा करने से सम्बन्धित ये योजनाएं अधिक बड़े शहरों के लिए समन्वित शहरी विकास कार्यक्रमों के अलावा है।

अब यह स्पष्ट है कि जल आपूर्ति एवं स्वच्छता जैसे आधारभूत क्षेत्रों में सामाजिक आधारिक संरचना की कमज़ोरियां अर्थव्यवस्था की क्षमता पर कई प्रकार से विपरीत प्रभाव डालती हैं। जब कभी इस क्षेत्र की आधारिक संरचना कमज़ोर होती है। इसका नुकसान मुख्य रूप से अधिक कमज़ोर वर्ग के लोगों को बर्दाश्त करना पड़ता है। दूसरे शब्दों में, यद्यपि इन सुविधाओं के अभाव का प्रत्येक वर्ग पर प्रभाव पड़ता है, किन्तु शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के गरीबों पर इसका सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। यह सर्वविदित है कि एक देश की कार्यशील जनशक्ति की आर्थिक उत्पादकता काफी हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि औद्योगिक एवं कृषि श्रमिकों को ये आधारभूत सुविधाएं कहां तक उपलब्ध हैं। अतः स्पष्ट है कि भारतीय श्रमिकों की तथाकथित निम्न उत्पादकता का बहुत कुछ कारण सामाजिक आधारिक संरचना की वह प्रारम्भिक अवस्था ही है। जैसे हम अब तक उसे दे पाने में समर्थ हो सके हैं।

## आर्थिक आधारिक संरचना : परिवहन

एक अर्थव्यवस्था में परिवहन सेवाओं का स्वरूप कई आर्थिक कारकों पर निर्भर करता है। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि देश के विभिन्न इलाकों के बीच किस सीमा तक आर्थिक अन्तर्निर्भरता पाई जाती है। उदाहरण के लिए, यदि प्रत्येक भौगोलिक इलाका आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर है तो एक इलाके में स्थित फर्में अपने अधिकांश कच्चे माल को उस इलाके के पूर्ति-कर्त्ता से ही खरीदेंगी और वे भी अपनी अधिकांश वस्तुओं को उस इलाके के लोगों को ही बेचेंगी। ऐसी स्थिति में प्रत्येक इलाके के भीतर कच्चे माल अथवा तैयार माल का परिवहन तुलनात्मक रूप से थोड़ी दूरी के अन्दर ही होगा। इसीलिए

ऐसी स्थिति में यातायात का वही साधन प्रमुख रहेगा जो थोड़ी दूरियों के यातायात के लिए सबसे ज्यादा सस्ता होगा। इस प्रकार ऐसी अर्थव्यवस्था में (यहां तक कि सम्पूर्ण देश के विस्तृत होने पर भी) रेलों व बड़े-बड़े ट्रकों की बजाय बैलगाड़ियां, देशी नावें और तीन पहिये वाली गाड़ियां यातायात के अधिक सस्ते साधन होंगे। यही बात यात्री परिवहन के लिए भी ठीक है क्योंकि लोग ज्यादातर अपने काम के दौरान अपने कार्य स्थल तक आते हैं अथवा वहां से जाते हैं। अतः अर्थव्यवस्था में अक्सर यात्री परिवहन का स्वरूप माल परिवहन के स्वरूप से मेल खाता है। दूसरे शब्दों में, यदि विभिन्न इलाके आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हों तो एक इलाके के मनुष्यों और वस्तुओं के दूसरे इलाकों में यात्रा करने के कम ही कारण बनेंगे।

औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने हमारी अर्थव्यवस्था के इलाकों को पहले की तुलना में एक दूसरे पर अधिक निर्भर बना दिया है। इसका कारण यह है कि बड़े पैमाने पर स्थापित एक उद्योग को, उदाहरण के लिए जैसे एक आधुनिक कपड़ा उद्योग को, अपने उत्पादन को सारे देश के बाज़ारों में भेजना पड़ता है। अहमदाबाद की कपड़ा मिलें अपने लिए कपास तो उसी इलाके से खरीद सकती हैं जो तुलनात्मक रूप से छोटा इलाका है किन्तु वे अपे कपड़े को सारे भारत में बेचती हैं। इसी तरह बंगाल का लोहा व इस्पात उद्योग पूर्वी भारत की खानों से कच्चा लोहा और कोयला लाता है किन्तु अपने उत्पादन को सारे देश में बेचता है।

पिछले दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में जिस ढंग से औद्योगीकरण हुआ है उसके कारण अर्थव्यवस्था के विभिन्न इलाकों के बीच परस्पर निर्भरता की सीमा और अधिक बढ़ गई है। आज हम देखते हैं कि उद्योग अपने कच्चे माल जैसे कोयला, कच्चा लोहा या कपास के मुख्य स्रोतों के इर्द गिर्द तक ही केन्द्रित नहीं रह गए हैं, बल्कि औद्योगीकरण कई नए इलाकों तक फैल गया है। भविष्य मं यह और अधिक फैलेगा। क्षेत्रीय आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के लिए भी अक्सर यह आवश्यक है कि एक उद्योग अपने उत्पादन के बाज़ार और अपने कच्चे माल के मुख्य स्रोत दोनों से काफी दूर हो। इसलिए यह आश्चर्यजनक नहीं है कि लम्बी दूरियों तक कुछ प्रमुख कच्चे मालों की ढुलाई भारत की परिवहन प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता होती जा रही है। इस प्रकार की लम्बी दूरी के भारी माल के लिए रेलवे सबसे ज्यादा सस्ता परिवहन का साधन है।

रेलों के बाद हमारी अर्थव्यवस्था में परिवहन का प्रमुख साधन सड़क परिवहन है। वास्तव में पिछले दो दशकों में मुख्य औद्योगिक केन्द्रों को जोड़ने वाले हमारे महामार्गों पर भारी ट्रक कई दृष्टियों से रेलवे की बराबरी में आ गए हैं। कई इलाकों में यात्री बस सेवाएं भी रेलवे के साथ सफलतापूर्वक मुकाबला करती हैं। यह सब कुछ अच्छी बनी हुई सड़कों के तन्त्र में सुधार के कारण हुआ है जो आज हमारी आर्थिक आधारिक संरचना का एक नया एवं महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। उदाहरण के लिए हमारे यहां राष्ट्रीय राजमार्ग हैं जो देश के महत्त्वपूर्ण नगरों एवं औद्योगिक केन्द्रों को जोड़ते हैं। राष्ट्रीय राजमार्गों के अलावा हमारे यहां सामाजिक सड़कें, अन्तर्राज्यीय आर्थिक महत्त्व की सड़कें और संवेदनशील सीमा क्षेत्रों में सड़के हैं। इन सब का विकास केन्द्र सरकार द्वारा किया गया है। रेलवे के एक सक्षम विकल्प के रूप में सड़क परिवहन के विकास का श्रेय कुछ हद तक विभिन्न राज्यों की सड़क परिवहन निगमों को दिया जाना चाहिए जिन्होंने यात्री परिवहन को आकर्षक बनाने की दृष्टि से वाहनों, डिपो एवं बस अड्डों के निर्माण तथा काफी बड़ी मात्रा में पर्यटन विकास के काम में निवाश किया है।

रेलों और सड़कों के अलावा, हमारी अर्थव्यवस्था में अन्तर्देशीय परिवहन के अन्य साधनों के रूप में समुद्र तटीय जहाजरानी, आन्तरिक जलमार्गों और घरेलू वायु सेवा की सेवाएं भी उपलब्ध हैं। अन्तर्राष्ट्रीय

जहाजरानी का काम बम्बई, कलकत्ता, हल्दिया, मद्रास, मंगलूर, मरमुगांव और विशाखापत्तनम जैसी मुख्य बन्दरगाहों एवं कई अन्य छोटी बन्दरगाहों द्वारा किया जाता है। एयर इंडिया एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय हवाई कम्पनियां भारत के अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण द्वारा चलाए जाने वाले हवाई अड्डों के माध्यम से काम करती हैं।

## आर्थिक आधारिक संरचना : शक्ति

एक अर्थव्यवस्था में जिस दर से विद्युत् शक्ति का उपभोग किया जाता है वह अक्सर इसके औद्योगीकरण की स्थिति का सूचक होता है। हमारे देश में प्रति व्यक्ति जितनी शक्ति का उत्पादन एवं उपभोग किया जाता है वह काफी कम है किन्तु यह बड़ी तेज़ी से बढ़ रहा है। यह इस बात का संकेत है कि देश में आधुनिक उद्योग बढ़ रहे हैं और अर्थव्यवस्था विकसित हो रही है।

तकनीकी दृष्टि से उन्नत देश में मुख्य रूप से तीन वैकल्पिक तरीकों से बिजली उत्पन्न की जा सकती है। कोयले का प्रयोग करने वाले ताप विद्युत् स्टेशन हो सकते हैं। तेज़ी से बहती हुई नदियां अथवा ऊंचे बांधों की क्षमता के प्रयोग से उत्पन्न की जाने वाली विद्युत् शक्ति हो सकती है। अन्तिम आण्विक शक्ति हो सकती है।

परम्परागत रूप से हमारी अर्थव्यवस्था में ताप विद्युत् ही शक्ति का प्रमुख स्रोत थी जो आज भी हमारे कुल विद्युत् उत्पादन का सबसे बड़ा हिस्सा है। बड़ी-बड़ी बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के विकास के साथ-साथ हमने भी बड़े पैमाने पर जल विद्युत् शक्ति का विकास किया है। अन्त में हम आण्विक शक्ति की दिशा में भी आगे बढ़े हैं। केवल उन्नत तकनीक वाले देश ही अणुशक्ति के कार्य को प्रारम्भ कर सकते हैं। महा शक्तियों के आण्विक क्लब के बाहर भारत उन कुछ थोड़े देशों में से एक है जिसने आण्विक क्षमता का विकास किया है और जो परमाणु ऊर्जा को शान्तिपूर्ण कार्यों में उपयोग करने के अपने कार्यक्रम में आत्मनिर्भर हो सकता है। चाहे बहुत छोटे रूप में ही सही इसने आण्विक शक्ति स्टेशनों को चुना है।

हमारी अर्थव्यवस्था में बिजली वितरण की दृष्टि से अब ग्रामीण क्षेत्रों को अधिक प्राथमिकता दी जा रही है। पिछले वर्षों की तुलना में अभी हाल में ग्रामीण विद्युतीकरण की दर में काफी तेज़ी से वृद्धि हुई है तथा छोटे पैमाने की सिंचाई के लिए विद्युत पम्प सैटों के कार्यक्रमों में भी तेज़ी से वृद्धि हुई है।

## आर्थिक आधारिक संरचना : सिंचाई

अधिकांश फसलों के उत्पादन में, विशेष रूप से उन इलाकों में जहां वर्षा का अभाव है अथवा यह काफी अधिक अनियमित है सिंचाई एक अधिक उपज देने वाला महत्त्वपूर्ण साधन होता है। कृषि के लिए प्राकृतिक सिंचाई के अलावा हमारी अर्थव्यवस्था शताब्दियों से मनुष्य-निर्मित सिंचाई की अच्छी विस्तृत प्रणालियों पर निर्भर रही है। अति प्राचीन काल से हमारे यहां कुओं, तालाबों एवं नहरों का प्रयोग केवल पीने के पानी की पूर्ति की दृष्टि से ही नहीं बल्कि हमारी कृषि भूमि की सिंचाई के लिए भी होता रहा है। किन्तु चाहे प्राकृतिक हो या मनुष्य-निर्मित हमारे देश के अधिकांश भागों में सिंचाई आंशिक रूप से हमेशा वर्षा पर निर्भर रही है। वर्षा होने पर तो भूमि को भी स्वाभाविक रीति से पानी मिल जाता है। उसी समय नदियों का जल स्तर भी ऊंचा हो जाता है जिनसे मनुष्य-निर्मित सिंचाई-नहरों को भी अधिक पानी प्राप्त हो जाता है। कुएं और तालाब भी पहले तो प्रत्यक्ष रूप से भर जाते हैं। फिर उसके बाद जैसे-जैसे वर्षा का पानी रिसकर ज़मीन में पहुंचता है उसके कारण भूगत जल स्तर के ऊंचा उठ जाने से उसका जल स्तर भी ऊंचा उठ जाता है। वर्षा के पानी के बिना कुओं और तालाबों में भी पानी का स्तर नीचा हो जाता है और देश के कुछ भागों में तो वे अक्सर सूख जाया भी करते हैं। जल स्तर के ऊंचा होने पर पानी खींचना

भी अधिक आसान रहता है क्योंकि यह काम ज्यादातर या तो हाथों से अथवा बैलों से अथवा अन्य जानवरों की सहायता से किया जाता है कभी-कभी वर्षा के कारण बाढ़ आ जाने से एक अच्छी मात्रा में अनचाही सिंचाई भी हो जाती है।

भारत में वर्षा अधिकांशतः मौसमी है और मानसून पर निर्भर है। मानसून आज तक संसार का एक ऐसी मौसमी विषय बना हुआ है जिसे समझाना सर्वाधिक कठिन है। यह हर साल नियमित रूप से लगभग जून के प्रारम्भ में हमारे समुद्री तटों से प्रारम्भ होती है और धीरे-धीरे मुख्य भूमि की ओर फैलती जाती है। बादलों में कितनी वर्षा समाई हुई है वे कितनी तेज़ी से और कहां गति करेंगे और कब लौट जाएंगे - ये सब ऐसे विषय हैं जिनके बारे में हर साल अनुमान लगाना होता है। कृषि-कार्यों का समय बहुत कुछ इस सूचना पर निर्भर करता है, किन्तु इस सूचना की अनिश्चितता के कारण भारत में खेती के काम अक्सर अनुमानों के आधार पर चलाने पड़ते हैं। इन सब कारणों से ही यह कहा जाता रहा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था मानसून क़ा जुआ है। आधुनिक तकनीकी एवं प्रबंध तकनीकों का प्रयोग प्रारम्भ हो जाने के बावजूद भी भारतीय कृषि अभी तक भी एक जुआ ही है, यद्यपि अनिश्चितता की मात्रा अवश्य घट गई है।

हमारे देश में कृषि की समस्या केवल अनिश्चित वर्षा के कारण ही नहीं है। वर्षा देश के सब भागों तक भी नहीं पहुंच पाती है। अतः उन भागों के लिए जहां मानसून पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुंच पाती है, सिंचाई और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाती है।

दामोदर घाटी अथवा भाखड़ा-नंगल जैसी बड़ी नदी घाटी परियोजनाएं सिंचाई एवं जल विद्युत् की बहुउद्देशीय परियोजनाएं हैं। संक्षेप में, यह बांध बनाकर वर्षा के मौसम में नदी में बढ़ जाने वाले पानी का संग्रह करने की योजना है। इस प्रकार से बना जलाशय एक दोहरा उद्देश्य पूरा करेगा। सर्वप्रथम, यह सिंचाई के पानी की वर्ष भर पूर्ति का एक स्रोत होगा जिसे आसपास की भूमि में नहरों के माध्यम से तथा आगे देश के सम्पूर्ण ग्रामीण इलाके में छोटी-छोटी नहरों व नालियों के द्वारा ले जाया जाएगा। द्वितीय, बांध के पानी की बड़ी ऊंचाई का प्रयोग देश के लिए जल विद्युत् उत्पन्न करने के लिए किया जा सकेगा। इससे कुछ शक्ति का प्रयोग बिजली से युक्त कुओं पंपसैट चलाकर छोटी सिंचाई के लिए किया जा सकेगा और इस प्रकार परियोजना की सिंचाई क्षमता में प्रत्यक्ष रूप से वृद्धि की जा सकेगी। इसका एक सहायक परिणाम यह भी होगा कि नदियों को नियंत्रित करने से बाढ़ नियंत्रण में मदद मिलेगी।

लघु सिंचाई परियोजनाओं में मुख्य रूप से गहरे नलकूप खोदना, पहले से विद्यमान अथवा नए खोदे जाने वाले कुओं में शक्ति संचालित पंपसैट लगाना आदि शामिल है। यह स्पष्ट है कि पानी की कमी वाले इलाकों में इस प्रकार की परियोजनाओं का ''कम'' आर्थिक महत्त्व नहीं है। एक अकेली परियोजना के लिए तो इसकी लागत कम है किन्तु कुल मिलाकर न तो इनकी लागत ही और न कुछ लाभ ही कम है।

## मुद्रा

अब तक हमने अर्थव्यवस्था की जिन महत्त्वपूर्ण सहायक संरचनाओं का वर्णन किया है उन सबमें एक तत्त्व समान रूप से पाया जाता है। ये सब चाहे सामाजिक हों या आर्थिक, भौतिक संरचनाएं ही हैं। इनका उसी प्रकार उत्पादन किया जाता है जिस प्रकार भौतिक पूंजी का उत्पादन किया जाता है। हम इनके उत्पादन पर उन साधनों का प्रयोग करते हैं जिन साधनों का प्रयोग अन्य दूसरी वस्तुओं के उत्पादन के लिए किया जा सकता है। भौतिक पूंजी ढांचों के अन्य प्रकारों की तरह, इन सामाजिक अथवा आर्थिक आधारिक संरचनाओं का ध्यान भी कुछ उत्पादनों की ओर ही होता है। अन्तर केवल इतना है कि इनका उत्पादन वस्तुओं का न होकर सेवाओं का होता है।

एक आधुनिक अर्थव्यवस्था में वस्तुओं व सेवाओं दोनों से सम्बन्धित लगभग समस्त आर्थिक गतिविधियों के लिए एक दूसरे संस्थागत ढांचे पर भी निर्भर करना पडता है जो भौतिक पूंजी के समस्त ढांचे से भिन्न है। वह अर्थव्यवस्था का मौद्रिक ढांचा होता है। यह ढांचा आर्थिक आधारिक संरचना की ही एक भाग होता है किन्तु वास्तविक संसाधनों का प्रयोग करके इसे भौतिक पूंजी की तरह उत्पन्न नहीं किया जा सकता। हम कह सकते हैं कि यह भी एक वस्तु का उत्पादन करता है जिसे हम मुद्रा कहते हैं किन्तु इसका उत्पादन उसी तरह नहीं किया जाता जिस तरह और जिस कारण से अन्य वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन किया जाता है। मुद्रा का उत्पादन अर्थव्यवस्था में वस्तुओं व सेवाओं के विनिमय करने की आवश्यकता में से उत्पन्न दो समस्याओं का समाधान करने के लिए किया जाता है। हमें सबसे पहले यह समझने की कोशिश करनी चाहिए कि कौन-सी समस्याएं हैं जिनके समाधान में अर्थव्यवस्था का मौद्रिक ढांचा सहायता करता है।

माना कि एक अर्थव्यवस्था में क, ख और ग तीन उत्पादक तथा चावल, कपड़ा और रहने का झोंपड़ा तीन वस्तुएं हैं। यह भी माना कि 'क' एक किसान हैं जिसके पास चावल फालतू हैं किन्तु वह इसके बदले में कपास चाहता है झोंपड़ा नहीं। 'ख' एक जुलाहा है जो कपड़ा दे सकता है किन्तु उसे इस समय झोंपड़े की ज़रूरत है, भोजन की नहीं। 'ग' एक झोंपड़ा बना सकता है किन्तु उसे इस समय भोजन की आवश्यकता है कपड़े की नहीं। संक्षेप में 'क', 'ख' से खरीदना चाहता है किन्तु 'क' 'ख' से नहीं। 'ख' 'ग' से खरीदना चाहता है किन्तु 'क' 'ग' से नहीं किन्तु तब भी कुल मिलाकर 'क' 'ख' और 'ग' वही खरीदना चाहते हैं जो 'क' 'ख' और 'ग' बेचना चाहते हैं।

स्पष्ट है कि, यदि केवल द्विपक्षीय विनिमय की ही कोशिश करेंगे, अर्थात् एक समय में दो व्यक्तियों के बीच दो वस्तुओं का विनिमय – जिसे वस्तु विनिमय कहा जाता है – तो वे विनिमय की इस त्रिकोणीय समस्या का कभी भी समाधान नहीं कर सकेंगे। किन्तु यदि ये तीनों अपनी वस्तुओं के बदले में एक चौथी नई वस्तु को स्वीकार करने के लिए सहमत हो जाते हैं तो इनमें से प्रत्येक इस समस्या का समाधान करने में समर्थ हो जाएगा। वह इस नई वस्तु के बदले में ही अपने उत्पादन को बेचेगा और फिर इसके बदले में उसे जिस किसी वस्तु की आवश्यकता होगी उसका क्रय कर लेगा। इस चौथी वस्तु का ऐसी वस्तु के रूप में होना आवश्यक नहीं है जिसका वास्तव में उत्पादन किया गया हो। यह केवल किसी भी अथवा प्रत्येक वस्तु पर केवल औपचारिक दावे के रूप में भी हो सकती है। इसे तब एक सामान्य क्रय शक्ति कहा जा सकता है, और यही मुद्रा की परिभाषा भी है।

स्वाभाविक रूप से 'क' 'ख' से सामान्य क्रय शक्ति स्वीकार करने में नहीं हिचकिचाएगा क्योंकि वह इससे जब कभी आवश्यकता होगी तब 'ख' की अथवा 'ग' की वस्तु खरीद सकता है। इसी तरह 'ख' और 'ग' भी जब कभी अपने उत्पादनों को बेचना होगा तो वे पाएंगे कि इनको मुद्रा के बदले बेच सकते हैं जबकि वे उनका वस्तु विनिमय में विनिमय नहीं कर सकते थे। इस प्रकार यदि समाज सामान्य क्रय शक्ति के रूप में संस्थागत रूप से मुद्रा का निर्माण करता है और इसे रूप में सबके द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो हरेक व्यक्ति के लिए इसका विनिमय के लिए प्रयोग करना सुविधाजनक होगा, फिर चाहे वह मुद्रा सोने की तरह अपने आप में एक मूल्यवान वस्तु हो या न हो, या वह करेंसी नोट की तरह एक कागज़ का टुकड़ा मात्र ही हो।

इस कारण, एक व्यक्ति मकान अथवा मशीन जैसी भौतिक पूंजी के समान ही मुद्रा को भी मूल्य का संचय अथवा एक परिसम्पत्ति के रूप में मान सकता है, यद्यपि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए मुद्रा की कुल मात्रा का अपने आप में परिसम्पत्ति के रूप में कोई मूल्य नहीं होता।

मुद्रा तब उस समस्या का समाधान करती है जिसे वस्तु विनिमय की समस्या कहा जाता है। यदि हम अपने उदाहरण को फिर से एक दूसरे दृष्टिकोण से देखें तो हम इसके अन्दर छिपी हुई विनिमय की एक दूसरी समस्या पाएँगे। इस अतिरिक्त समस्या को समय अन्तर की समस्या कहा जा सकता है। माना कि 'क' जिसने चावल का उत्पादन किया था उसे एक घर की आवश्यकता है और 'ग' जो एक घर का निर्माण कर सकता है उसे भी चावल की आवश्यकता है। किन्तु माना कि 'ग' को चावल की तो अभी आवश्यकता है किन्तु घर के निर्माण करने में उसे कुछ समय लगेगा माना कि छः महीने लगेंगे अथवा माना कि 'ग' तो घर की पूर्ति अभी कर सकता है किन्तु 'क' को अपने मकान के बदले चुकाने लायक फालतू चावल का उत्पादन करने में तीन वर्ष का समय लगेगा। दोनों ही मामलों में एक ऐसी समय की अवधि है जिसके दौरान केवल वायदे पर उधार देकर एक व्यक्ति को दूसरे पर विश्वास करना होगा। यदि यह उधार नहीं दिया जाता है तो विनिमय नहीं हो सकेगा।

मौद्रिक ढांचा उन संस्थाओं से ही मिलकर बना होता है जो अर्थव्यवस्था को मुद्रा की पूर्ति एवं साख निर्माण की सुविधाएं प्रदान करती हैं। यह मुद्रा और साख ही है जो आधुनिक विनिमय अर्थव्यवस्था को सरल वस्तु-विनिमय के मनुष्य के प्रारम्भिक प्रयोगों से अलग करती है।

## आर्थिक आधारिक संरचना : मुद्रा पूर्ति

अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति का नियमन उस संस्थागत अधिकारी द्वारा होता है जिसे नोट निर्गमन का अधिकार प्राप्त होता है। यह स्पष्ट रूप से राज्य का ही एक मात्र अधिकार होता है। हमारी अर्थव्यवस्था में यह काम सरकार की तरफ से भारत के रिजर्व बैंक द्वारा किया जाता है।

जनता के पास मुद्रा की पूति कितनी होनी चाहिए इसका निर्णय सरकार द्वारा ही किया जाता है। परम्परागत रूप से अधिकारी एक निश्चित समयावधि के दौरान आशातीत आर्थिक क्रियाकलापों की मात्रा के आधार पर ही करेंसी की आवश्यकता के बारे में अनुमान लगाने की कोशिश करते थे। उदाहरण के लिए, भारतीय रिजर्व बैंक कृषि कार्यों के व्यस्त मौसम में करेंसी की एक बड़ी मात्रा जारी करने की कोशिश करेगा। अन्यथा, कृषि क्षेत्र के बहुत ज़रूरी सौदों में नकदी की कमी के कारण देरी हो सकती है अथवा रुकावट आ सकती है। किन्तु आगे चलकर धीरे-धीरे रिज़र्व बैंक की भूमिका केवल मात्र बाज़ार की आवश्यकताओं को पूरा करने की बजाय अधिक सकारात्मक (विधायक) होती गई। उदाहरण के लिए, यदि यह महसूस किया जाता है कि बाज़ार में सौदों की बढ़ती हुई मात्रा को प्रोत्साहित करने की बजाए नियन्त्रित करने की आवश्यकता है तो अधिकारी करेंसी का विस्तार करने के बजाय इसे कम कर सकते हैं। कभी-कभी सौदों में वृद्धि गैर-उत्पादक कार्यों के कारण भी हो सकती है जिसे इस प्रकार के सकारात्मक उपायों द्वारा नियन्त्रित करने की आवश्यकता होती है। हाल ही के वर्षों में हमारी अर्थव्यवस्था में जनता के पास करेंसी की मात्रा में बड़ी तेज़ी से वृद्धि हुई है। 1970-71 में 4000 करोड़ रु० में थोड़ी-सी अधिक मात्रा में बढ़कर यह मार्च 1989 तक 38000 करोड़ रु० से अधिक हो गई।

जनता के पास मुद्रा की पूर्ति में अकेली करेंसी ही शामिल नहीं होती। एक अर्थव्यवस्था में जैसे-जैसे बैंकिंग आदतें बढ़ती जाती हैं वैसे-वैसे लोग अपनी मुद्रा का ज्यादा बड़ा भाग घर में रखने की बजाय बैंक जमाओं में रखने लगते हैं। उदाहरण के लिए, हमारे देश में 1960-61 में जनता के पास मुद्रा पूर्ति का 73 प्रतिशत तक जनता के पास नकदी के रूप में ही था केवल शेष ही बैंक जमाओं के रूप में रखा हुआ था। तब से अब तक हमारी अर्थव्यवस्था की कुल मुद्रा पूर्ति में जमा मुद्रा का हिस्सा काफी तेज़ी से बढ़ा है। उदाहरण के लिए, मार्च 1989 में जनता द्वारा अपने पास रखी गई नकदी की मात्रा जनता के पास कुल मुद्रा पूर्ति का केवल 58 प्रतिशत ही थी। बैंकों द्वारा साख निर्माण का जमा मुद्रा की मात्रा के साथ काफी महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है जिसका विवेचन हम नीचे करेंगे।

## आर्थिक आधारित संरचना : बैंकिंग एवं अन्य वित्तीय संस्थाएं

उत्पादन और विनिमय में नकदी सौदों की बजाय ''साख'' सौदों का महत्त्व इस तथ्य में से उत्पन्न होता है कि उत्पादन और विनिमय दोनों में समय लग सकता है। एक उत्पादक को वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए समय लगता है किन्तु उसे अपने आपको तथा उत्पादन के अन्य कारकों को अपने उत्पाद को बेचने से पहले उत्पादन की अवधि के दौरान ही भुगतान करना होता है। इन भुगतानों को करने के लिए उसे किसी न किसी तरह कोष प्राप्त करने होते हैं। इसी तरह, एक क्रेता के लिए भी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जब उसके लिए एक वस्तु खरीद पाना तभी सम्भव हो जब उसे उसका भुगतान बाद में अथवा किश्तों में करने की इजाजत दी जाए। इस प्रकार इन दोनों ही स्थितियों में विक्रेता और उपभोक्ता को ऐसे लोगों को खोजने की आवश्यकता रहती है जो उन पर तब तक विश्वास कर सके जब तक वे पूरा भुगतान कर पाए अथवा इसके लिए उन्हें कहीं न कहीं से ऋण प्राप्त करना पड़ता है। दोनों ही स्थितियों में इस बात की आवश्यकता रहती है कि कोई न कोई ऐसा हो जो इन भविष्य में भुगतान करने वालों पर विश्वास कर सके। इस विश्वास को ही तकनीकी भाषा में ''साख'' कहा जाता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में बैंकिंग प्रणाली साख का मुख्य स्रोत है। बैंक ऋणों के रूप में साख देते हैं। बैंकों के अलावा कुछ अन्य वित्तीय संस्थाएं भी हैं जो ऋण देती हैं और इनमें प्रमुख हैं निजी साहूकार।

जब एक व्यक्ति ऋण के रूप में उधार देता है तो वह अपने पास जमा नकद राशि में से ही ऐसा कर सकता है। किन्तु बैंकिंग प्रणाली साख का निर्माण कर सकती है और अपनी नकद जमाओं की राशि से कई गुना उधार दे सकती है। यह बैंकिंग व्यवसाय के एक बहुत ही रुचिकर तथ्य के कारण है जिसका विवेचन हम नीचे करेंगे।

जब हम किसी बैंक के पास सुरक्षित रखने की दृष्टि से अपनी नकदी को जमा कराते हैं तब हम वापिस निकलवाकर नियमित रूप से तो इस जमा के एक छोटे से भाग का ही प्रयोग करते हैं। अतः इस शेष बचे रह गए भाग को बैंक आसानी से उधार दे सकता है। जो व्यक्ति बैंक से उधार लेता है वह भी इसे जमा के रूप में ही रखता है, जब कभी उसे आवश्यकता पड़ती है तब वह इसके भाग को निकालता रहता है। इस प्रकार, बैंकिंग प्रणाली यह जानते हुए कि जितनी राशि के ऋणों का वादा किया गया है उस समूची राशि को एक ही समय नहीं निकलवाया जायेगा। वह अपने पास जमा नकद राशि की तुलना में ही बड़ी राशि को आसानी से ऋणों के रूप में उधार दे सकती है। इस तरह ही केवल एक छोटे से भाग को ही वास्तव में नकद-कोष के रूप में रखकर बैंकिंग प्रणाली द्वारा बैंक सम्भव (अर्थात् ऋणों के वादे) का निर्माण किया जा सकता है ?

भारतीय बैंकिंग प्रणाली भारतीय रिजर्व बैंक नामक संस्था द्वारा नियन्त्रित की जाती है। भारतीय रिजर्व बैंक ही देश में मुद्रा की पूर्ति को नियमित करता है। यह सरकार एवं अन्य बैंकों के लिए केन्द्रीय बैंक के रूप में भी काम करता है। बैंकिंग प्रणाली एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं के क्रिया-कलापों के निरीक्षण की दृष्टि से भारतीय रिजर्व बैंक को कई अधिकार दिए गए हैं।

बैंक व्यापारिक और अन्य अल्पकालीन ऋण प्राप्तकर्ताओं अथवा औद्योगिक या कृषि उत्पादन की दीर्घकालीन आवश्यकताओं दोनों के लिए साख प्रदान कर सकते हैं। भारत की बैंकिंग प्रणाली में मुख्य रूप से वे वाणिज्य बैंक शामिल हैं जो केवल अल्पावधि के ऋण ही प्रदान करते हैं। इसके अलावा, पीछे इनका कामकाज मुख्य रूप से शहरी क्षेत्र तक ही सीमित रहा है। ये भारतीय बैंकिंग प्रणाली की काफी बड़ी सीमाएं हैं। आगे चलकर काफी समय बाद भारतीय रिजर्व बैंक ने भारत के बैंकों को दीर्घकालीन तथा कृषि के लिए साख सुविधाएं प्रदान करने की दृष्टि से प्रेरित करने के लिए कई कदम उठाए हैं।

संसद के एक अधिनियम के द्वारा देश के बड़े बैंकों का राष्ट्रीयकरण भी कर दिया गया है जिससे कि साख के बारे में निर्णय लेते समय केवल मात्र लाभदायकता की बजाय सामाजिक प्राथमिकताओं को भी उचित महत्त्व दिया जा सके। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीयकृत बैंकों को अपेक्षाकृत कम ब्याज दरों पर पिछड़े क्षेत्रों एवं कमज़ोर वर्ग के लोगों को उधार देने के निर्देश दिए गए हैं।

बैंकिंग प्रणाली के साथ-साथ हमारी अर्थव्यवस्था में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं की भी एक काफी बड़ी संख्या है। उद्योगों के लिए दीर्घकालीन वित्तीय व्यवस्था बैंकों की बजाय इन संस्थाओं में ही होती है। इनमें से कुछ संस्थाएं तो सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योग एवं कृषि के लिए विशेष क्षेत्रों को दीर्घकालीन एवं मध्यकालीन वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए विशेष रूप से बनाई गई हैं। कुछ अन्य इस काम में अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देती हैं जैसे भारतीय जीवन बीमा निगम। उदाहरण के लिए, इसके द्वारा भारी भरकम निवेश करने के फलस्वरूप कई तरीकों से निजी क्षेत्र को काफी बड़ी धन राशि प्राप्त होती है।

परम्परागत रूप से मौद्रिक पूंजी प्राप्त करने वाले उद्योग भी अपनी कम्पनियों के शेयर्स जनता को बेचते हैं अथवा वित्त जुटाने के लिए जनता से उधार लेते हैं। जो संस्थाएं इस प्रकार के काम में सहायता करती हैं उन्हें स्टॉक-एक्सचेंज कहा जाता है। स्टॉक-एक्सचेंज से ही अर्थव्यवस्था का पूंजी बाज़ार बनता है जिसे ''शेयर बाज़ार'' भी कहा जाता है क्योंकि यहां कम्पनियों के शेयर्स को बेचा और खरीदा जा सकता है।

बैंकिंग प्रणाली, गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं, पूंजी बाज़ार और इन सबके ऊपर अपनी व्यापक नियन्त्रणकारी शक्तियों सहित भारतीय रिजर्व बैंक ये सब मिलकर भारतीय अर्थव्यवस्था की मौद्रिक आधारिक संरचना बनती है।

## अभ्यास-प्रश्न

1. भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य सामाजिक और आर्थिक आधारिक संरचनाएं कौन-कौन सी हैं ?
2. शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास की आधारिक संरचनाओं का वर्णन करते हुए इन पर नोट लिखिए।
3. भारत में परिवहन, ऊर्जा एवं सिंचाई की आधारिक संरचनाओं को संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. मुद्रा की संस्था पर नोट लिखिए।
5. साख की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? क्या आप समझा सकते हैं कि बैंक अपने ऋण प्राप्तकर्त्ताओं को साख कैसे उपलब्ध करा सकता है ? या आप कुछ अन्य एजेंसियों का नाम भी बता सकते हैं जो साख प्रदान करती हैं ?